नाटक - स्वयंवर

पात्र:
1. राजा मुक्तिपुरी - शुद्धोपयोग. [illegible]
2. राजा की पुत्री मुक्ति
3. मुक्ति की सखी - समता

सुमति - [illegible]

4, 5, 6, 7, 8, 9 - विभिन्न देशों के राजा
4. देवपूजकराज 5. अध्ययनराज 6. संयमराज 7. तपराज 8. दानराज
9. ~~ध्रुवतत्त्वराज~~ चैतन्य चक्रवर्ती 10. केवलराज

- [illegible]
- मिथ्यात्व [illegible]
- अविरति - [illegible]
- [illegible]
- [illegible]
- योग [illegible]

राजा - अहो कैसे कहूँ कि पुत्री मुक्ति विवाह योग्य हो गयी है, पर उसके लि योग्य कोई योग्य ~~युवक~~ राजकुमार दिखाई ही नहीं देता? क्या वसुँधरा पुरुष वीरों से खाली हो गयी है, कि जो मेरी पुत्री का वरण कर सके।

ध्रुवतत्त्वराज को छोड़कर बाकी सभी राजा गण एक साथ कहते हैं

सभी राजा → राजन् हम हैं वीर, हम वरेंगे आपकी पुत्री मुक्ति को

राजा - तो ठीक है एक-एक करके आप अपनी-अपनी विशेषतायें को प्रगट करें, बेटी मुक्ति जिसको योग्य समझेगी उसके ही गले में वरमाल डाल देगी। क्यों बेटी ठीक है न

बेटी मुक्ति :- जी पिताश्री जैसा आप योग्य समझें

प्रथम राजा देवपूजराज → महाराज मेरा नाम देवपूजराज है, मैं पिछले 50 वर्षों से नित्य देवपूजा करता हूँ, ऊँची आवाज में, सुरीले कंठ से जब तक मैं पूजा न करूँ मैं भोजन नहीं करता, मैंने देव पूजन के कई बड़े अनुष्ठान भी किये हैं, मैंने जीवन में कई विधान और पंचकल्याणक किये हैं, यहाँ तक कि मैंने प्रत्येक रवि को पार्श्वनाथ भगवान की पूजन की है तो शनिवार को मुनिसुव्रतनाथ की पूजन से देवालय को गुंजायमान किया है ~~मुक्ति~~ अतः मुक्ति को मुझे ही वरण करना चाहिए।

मुक्ति → राजकुमार अभी तो आपको सच्चे अर्थों में अपना परिचय ही नहीं। आप अस्पर्शी ज्ञानस्वरूपी तत्व हैं और आप भाषा वर्गणा रूप सुरीले कंठ से अपना परिचय दे रहे हैं आप मेरे योग्य कहाँ? दूसरे आपकी पूजन लोभ कषाय या निदान ~~बंध~~ हेतु ही रही तब तो आप दिन विशेष से तीर्थंकरों में बंटवारा किये हैं आपके ख्याल में तो ये ही नहीं कि किसी भी तीर्थंकर की किसी भी क्षेत्र में अथवा किसी भी काल में भक्ति तत्काल सम्यक्त्व रूपी फल की प्राप्ति होती है। अतः ~~आप~~ विश्राम करें

द्वितीयराज

अध्ययनराज → राजन मुक्ति मेरे ही योग्य है क्योंकि मैं जीवनभर शास्त्र अध्ययन करता रहा मैंने ग्यारह अंग और नौ पूर्व पूरे पढ़ लिये हैं मैं किसी के भी कोई भी प्रश्न का जवाब दे सकता हूँ, आज कोई भी मेरी टक्कर में नहीं लगता, मेरा क्षयोपशम अद्भुत है, कोई भी मुझसे शास्त्रार्थ नहीं कर सकता, मैंने षट्खंडागम पढ़ा है, राजन मैंने धवला टीकायें पढ़ी हैं, मैं तत्वार्थसूत्र की टीकायें कंठस्थ याद भी हैं, राजन मुक्ति से कहो कि वह मुझे वरण करे

मुक्ति → अध्ययनराज बड़ा ही गर्व है आपको अपने क्षयोपशम पर, जिन आचार्य भगवंतों की टीकायें आपको याद हैं वह तो अपने को लघु समझते हैं और मार्दव धर्म का पालन करते हैं वह कहते हैं कि हमने तो स्वयं को ही मात्र पढ़ा है और कुछ नहीं और यदि जीव का विशेष भी जाना है तो उस सामान्य की दृष्टि के प्रयोजन से ही जाना है। उस विशेष में अटके का नहीं और आप अपने क्षयोपशम पर ही मोहित हैं जो कर्म की अपेक्षा रखता है और उस कर्म निरपेक्ष उस पारिणामिक की आपको खबर ही नहीं है। कृपया कर अभी आप स्व को पढ़ें, पर का नहीं।

तृतीयराज → संयमराज → मुक्ति सत्य कहा इन्होंने ग्यारह अंग पढ़े पर कोरे के कोरे ही रहे, मेरा जीवन देखो मैं छहकाय के जीवों की किंचित विराधना नहीं करता, मैं पानी छानता हूँ, मर्यादित खान पान करता हूँ, मैंने इन्द्रियों पर विजय पा ली है मैं सर्दी हो या गर्मी मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता है, मैंने भरी गर्मी में पहाड़ों पर खड़े रहकर साधना की है, केवल इस कारण कि मुक्ति मुझे मिलेगी। आओ मुक्ति मुझसे मिल जाओ तुम्हारी खातिर मैंने शरीर को कौन से कष्ट नहीं दिये।

मुक्ति → राजकुमार संयमराज आप भूल रहे हैं, आप पड़ोसी के कार्यों को अपना कार्य बता रहे हैं, एक क्षेत्र अवगाह संबंध होने से आप भूल गये कि जो असमान जाति द्रव्य पर्याय मेरी थी ही नहीं, उससे होने वाले कार्य मेरा कैसे हो सकता है। स्वभाव पर लक्ष होता है तो दृष्टि शरीर की अनुकूलता प्रतिकूलता नहीं देखती। इसका नाम संयम था, पर आप तो शरीर के कार्यों से ही अपनी महानता मान रहे हैं। क्षमा करें और ~~[illegible]~~।

तपराज → राजन पूर्व राजकुमारों को अयोग्य ठहराया यह योग्य ही है, आप मेरी तरफ लक्ष्य कीजिये। मैंने छह-छह माह के उपवास किये। मैंने बीस वर्ष से नमक नही खाया, मुक्ति मैंने विविध प्रतिज्ञाओं का पालन करते हुये भोजन लिया, भोजन मे कोई कमी हुई तो फिर प्रायश्चित लिया, और मैंने दुनिया को दिखा दिया कि मैं कितना बड़ा तपस्वी हूँ। मैंने अपने तप के प्रभाव से कई चमत्कार किये हैं। दुनिया मे लोग मेरा लोहा मानते हैं। कई व्यंतरों से मैंने दोस्ती कर रखी है, आप मुझे ही माला पहनावें।

मुक्ति → राजन बड़े ही अज्ञानी हो, चैतन्य चमत्कार की खबर नही होने से दुनिया के जड़ चमत्कार से प्रसिद्धि पाने की बुद्धि बनी रहती है, मुक्ति जड़ चमत्कार से प्राप्त नही होती यह बात से बेखबर आप कभी मुक्ति को नही पा सकते। बड़े उपवास रखकर आपने काफी मान कमाया है और पूज्यता हासिल कर ली, उन उपवास के पुण्य का फल तो आपने यही नगद पूज्यता पाकर ले लिया अब आपके पास क्या बचा जो मुक्ति को देगा।

दानराज → मुक्ति मेरी सुनो, राजन आप भी सुनो मैंने मुक्ति को पाने के लिए क्या-क्या नही किया। मैंने बड़ी-बड़ी धर्मशालायें बनवायी, मैंने औषधालय खुलवाये, मैंने स्कूल कॉलेज खुलवाये, लोग मानते हैं कि मैं क्या हूँ? और राजन आप कहें तो मैं आपकी धर्मशाला के निर्माण में भी कुछ मदद कर दूँ। मैं पंच कल्याणक मे 25 लाख रुपयों की बोली लेकर सौधर्म इन्द्र बना था, हाथी पर बैठकर मैं नगर मे घूमा था, लोग वाह वाह कह उठे, मुक्ति प्रसन्न होकर वरमाला मुझे डालो आपके भाग्य खुलने का समय आ गया है,

मुक्ति → रे पापी, हाथी पर बैठकर अपनी मान प्रतिष्ठा कराकर तू क्या सोचता तू धर्मात्मा है। अरे राजकुमार अभी बुद्धि विकसित कर सोचो कि एक संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव जो कि सब जैसा ही परमात्म हृदय है, उस पर बैठकर अपना बड़प्पन इसका नाम त्याग है क्या? अरे होना तो मान का त्याग था, पर तुमने त्याग का ही मान कर लिया। और मुक्ति को लेने आये हो।

राजन → लगता है पृथ्वी पुरुषार्थी वीरों से रहित हो गयी है, क्या मुक्ति तुम्हारे निर्णय से मैं सहमत हूँ, पर क्या, तुम्हारा स्वयंवर अवरुद्ध हो जायेगा। अरे राजकुमार आप तो शांत बैठे हैं आपने अपने बारे में कुछ नहीं बताया, कहिये आप भी तो कुछ कहिये।

ध्रुवतत्त्वराज — राजन क्या कहूँ, जगत में कुछ ऐसा लगता ही नहीं जिसमें चित्त रंजायमान हो। पर द्रव्य में एकत्व या कर्तृत्व हि दुःख का कारण है। अतः ज्ञायक स्वभाव से हटने का परिणाम ही नहीं होता, जबसे तत्त्व निर्णय हुआ है, हेय, ज्ञेय, उपादेय रूप बुद्धि हुई है, तबसे स्वभाव में ही रस आता है, हालांकि जब स्वभाव की स्थिरता टूटती तो देवपूजा, दान, संयम आदि का भी भाव आता है, पर कमजोर क्या कहने लायक होती है? नहीं राजन अल्पस्थिरता जन्य पुरुषार्थ में होने वाले कार्य शुभ बंध के कारण हैं जो कि संसार को ही बढ़ाते हैं उनसे मेरी शोभा कैसी? अतः राजन मैं शांत हूँ। राजन क्या कहूँ देखो तत्त्व विचार की महिमा, तत्त्व विचार रहित — — — —

— — — — मेरे, व मिलन गर्भ से

मुक्ति / पिताजी मैं तो ध्रुवतत्त्वराज का ही वरण करूंगी

ध्रुवतत्त्वराज - पर मुक्ति मुझे तुम्हें वरण करने का भी राग नहीं है, मेरी दृष्टि तो ध्रुवस्वभाव पर ही है, ~~पर्याय का~~ मैं मुक्त स्वरूप ही अनुभवता हूँ, मेरी दृष्टि मुक्ति पर्याय पर भी नहीं है

मुक्ति! पर ध्रुव मेरा आश्रय तो त्रिकाली ध्रुव ही है। मैं भी क्या अपने को पर्याय अनुभव करती हूँ, मैं भी तो ध्रुव हूँ और ध्रुव में ही समा जाना चाहती हूँ, आओ ध्रुवसम एक हो जावें। और दोनों गले लग जाते हैं